मूर्त से अमूर्त की ओर : गणित शिक्षण जो हमेशा याद रहे

सोनिया कुण्डू

शुरुआत एक सरल, लेकिन महत्त्वपूर्ण सवाल से करते हैं : *क्या हम शिक्षक के रूप में एक सार्थक राह बना सकते हैं? बच्चे वस्तुओं की गिनती करने से लेकर लिखित एल्गोरिदम को समझने की दिशा में आगे कैसे बढ़ सकते हैं?*

'एल्गोरिदम' शब्द सुनते ही दिमाग़ में अकसर रटकर सीखने और तय चरणों को करने या दोहराने की छवि उभरती है। लेकिन ज़रा किसी ऐसे बच्चे की कल्पना कीजिए, जो न केवल एल्गोरिदम के पीछे छिपी अवधारणा को समझता है, बल्कि उसकी पड़ताल करने की प्रक्रिया का आनन्द भी उठाता है। और यही गहरी वैचारिक समझ आगे चलकर उसे एल्गोरिदम का स्वतंत्र और प्रभावी ढंग से उपयोग करने में समर्थ बनाती है। मैंने महसूस किया है कि यह राह हमेशा सीधी या आसान क़तई नहीं होती। इस सफ़र में वास्तव में कौन-सी चीज़ें मददगार होती हैं? क्या केवल शिक्षण अधिगम सामग्री (टीएलएम) के साथ काम करना ही काफ़ी होता है या हमें उससे भी ज़्यादा की ज़रूरत है? मैं इस आलेख में अपनी शिक्षण यात्रा के अनुभवों को साझा कर रही हूँ, जो निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित हैं :

- मानक गणितीय चिह्नों या संकेतों से परिचय कराने से पहले बच्चों के परिचित सन्दर्भों से शुरुआत करना।
- ठोस सामग्रियों का उपयोग केवल सहायक सामग्री के रूप में नहीं, बल्कि स्थानीय मान के निरूपण के रूप में करना।
- मानक एल्गोरिदम से परिचय कराने से पूर्व बच्चों को उनके अपने अनौपचारिक तरीक़ों का इस्तेमाल करने का अवसर देना।
- ठोस सामग्रियों से चित्रात्मक साधनों और फिर प्रतीकात्मक संकेतों की ओर धीरे-धीरे बढ़ना।
- 'हासिल लेना' को रटे-रटाए नियम की तरह नहीं, बल्कि इस समझ के साथ पढ़ाना कि जब 10 इकाइयाँ आपस में मिलती हैं, तो वे मिलकर एक नई दहाई बनाती हैं।

इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर मैंने अपनी कार्य-योजना बनाई। इनसे मुझे पाठ में सोच-समझकर तैयार की गई सामग्रियों व असल जीवन के उदाहरणों को शामिल करने में मदद मिली। मेरा उद्देश्य बच्चों के साथ रोचक चर्चा के ज़रिए उनमें ऐसी गहरी समझ विकसित करना था, ताकि वे अवधारणाओं को यांत्रिक तरीक़े से सीखने की बजाय अर्थपूर्ण ढंग से समझ सकें।

आइए, अब मैं आपको अपने विद्यार्थियों की सीखने की उस यात्रा पर ले चलती हूँ, जहाँ उन्होंने कक्षा-1 में संख्याओं की बुनियादी समझ से आगे बढ़ते हुए कक्षा-2 में 'हासिल के साथ' दो अंकों की संख्याओं को जोड़ने के एल्गोरिदम को अमल में लाना सीखा।

कक्षा-1 ख़त्म करते-करते मेरे विद्यार्थियों में संख्याओं को लेकर एक मज़बूत बुनियादी समझ विकसित हो चुकी थी। वे दहाइयों के बण्डलों और इकाइयों की सहायता से 99 तक की संख्याएँ गिन सकते थे। वे बड़ी संख्या से आगे गिनना (counting-on strategies) में भी कुशल हो गए थे। जैसे कि जब उनसे 16 + 3 जैसे सवालों को हल करने को कहा जाता तो वे बड़ी संख्या (16) को दिमाग़ में रखते और वहाँ से आगे की गिनती गिनते। इस स्टेज में बच्चों का लक्ष्य केवल 20 तक की संख्याओं का जोड़ सीखना था। इसके लिए उन्होंने

की-वर्ड : *जोड़, रीग्रुपिंग, बच्चे का सन्दर्भ, समझ, प्रयोग*

सोच-समझकर चुने गए संख्या-युग्मों के माध्यम से जोड़ का अभ्यास किया।

मैं जानती थी कि कक्षा-2 में आने पर हमें 10 से 99 के बीच की संख्याओं के जोड़ के एल्गोरिदम के बारे में उनकी अवधारणात्मक समझ को और गहरा करना होगा (इसलिए संख्याएँ इस तरह चुनी गई थीं कि उनका जोड़ हमेशा 100 से कम रहे)। लेकिन यह काम इस तरह करना था कि यह सीख उनके लिए अर्थपूर्ण बनी रहे और उनके अपने जीवन के अनुभवों से जुड़ी भी हो। इसलिए मैंने असल ज़िन्दगी की परिस्थितियों की एक ऐसी क्रमबद्ध शृंखला डिज़ाइन की, जो पूरी तरह से उनके अपने परिवेश से जुड़ी थी।

परिचित सन्दर्भों से जोड़ना : दुकान पर एक सुबह

सुबह की चर्चा के दौरान मैंने बच्चों को एक कहानी सुनाई :

"मुझे नूडल्स और बटर जैसी कुछ चीज़ें ख़रीदनी थीं, इसलिए कल मैंने अपनी गुल्लक तोड़ दी। मैं बटर लेने चौहान जी की दुकान पर गई। वहाँ मेरे अलावा तीन ग्राहक और थे। चौहान जी मेरी तरफ़ ध्यान ही नहीं दे रहे थे!"

फिर मैंने अपने विद्यार्थियों से पूछा, "तुम्हें क्या लगता है, वे मुझे अनदेखा क्यों कर रहे थे?"

बच्चों के जवाब समझदारी से भरे और मज़ेदार थे :

- "शायद वे चाहते थे कि आपको स्कूल पहुँचने में देरी हो जाए।"
- "शायद बाक़ी लोग उनके रिश्तेदार होंगे।"
- "शायद आपके पास पैसे ही नहीं थे।"
- "हो सकता है आपके पास बहुत सारे सिक्के रहे हों!"

यहाँ पर मैंने उन्हें बताया : "हाँ! मेरे पास सिर्फ़ एक-एक रुपए के सिक्के ही थे।"

इससे अकस्मात सिक्कों, विलम्ब और दुकानदारों से जुड़े अनुभवों को लेकर बातचीत शुरू हो गई।

मूर्त सामग्रियों के उपयोग पर आधारित एक गतिविधि

इस विचार को बच्चों के लिए जीवन्त बनाने के उद्देश्य से मैंने एक गतिविधि तैयार की। मैं कक्षा में बटर, बिस्कुट और नूडल्स के ख़ाली पैकेट लेकर आई और उन्हें छोटे-छोटे समूहों में बाँट दिया। मैंने इन चीज़ों का चयन इसलिए किया था, क्योंकि बच्चे उनसे अच्छी तरह परिचित थे। प्रत्येक पैकेट पर उसकी क़ीमत लिखी हुई थी, जो कि 10 से 99 ₹ के बीच थी। (नूडल्स की 10 ₹, बटर की 57 ₹ और बिस्कुट की 5 ₹)।

नमूने के तौर पर मैं कक्षा में एक रुपए वाले 75 सिक्के भी साथ लाई थी। मैंने पाँच विद्यार्थियों को दुकानदार और ग्राहकों का एक ऐसा दृश्य प्रस्तुत करने के लिए कहा, जिसमें उन्हें सामान बेचना था और बिल बनाकर उसका पूरा हिसाब जोड़ना था। विद्यार्थियों ने पूरे उत्साह के साथ इस गतिविधि में हिस्सा लिया। इसमें उन्होंने अपनी ओर से भी कई छोटे-छोटे प्रसंग और संवाद जोड़ दिए, जिससे यह गतिविधि और भी रोचक बन गई। इससे यह भी स्पष्ट हुआ कि उनमें पैसों की समझ और गिनती करने के तरीक़े परिपक्व हो रहे थे।

फिर मैंने बच्चों को समूहों में बाँट दिया और उनसे तीनों वस्तुओं की कुल क़ीमत निकालने को कहा। मैंने देखा कि बच्चों के बीच बेहद जीवन्त चर्चाएँ हुईं और उन्होंने जोड़ने के अलग-अलग तरीक़े अपनाए। कुछ समूहों ने बटर की क़ीमत से शुरुआत करते हुए 'काउंटिंग-ऑन स्ट्रेटेजी' का इस्तेमाल किया। कुछ समूहों ने गणना को आपस में बाँट लिया। एक बच्चे ने दहाई के अंकों का जोड़ किया तो दूसरे ने इकाई के अंक जोड़े। वहीं कुछ समूहों ने राउंड-अप का सहारा लिया, जैसे बटर की क़ीमत ₹ 57 को 60 मानकर बिस्कुट की क़ीमत के 5 ₹ जोड़ने के लिए उन्होंने केवल 2 और जोड़े (यानी उन्होंने 57 में 5 को दो चरणों में जोड़ा : 57 + 3 + 2)। कुछ बच्चों ने दूसरे समूहों के अपने साथियों के साथ उत्तरों का मिलान किया, जिससे उनके बीच आपस में हल्की-फुल्की बहस भी छिड़ गई, "अरे नहीं, तुम नूडल्स के पैसे जोड़ना तो भूल ही गए!" या "चलो, एक बार फिर से धीरे-धीरे जोड़ते हैं।" इस तरह आपस में चर्चा और संवाद करने से उन्हें शिक्षक के दख़ल के बिना ख़ुद से ही अपनी ग़लतियों को सुधारने में मदद मिली।

अधिक दक्ष रणनीतियों की ओर

इस गतिविधि ने हमें विचार-मन्थन के एक अहम पड़ाव पर पहुँचा दिया। मैंने उनसे पूछा, "अगली बार दुकान पर अपना समय बचाने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?" उन्होंने तुरन्त जवाब दिया, "सिक्कों की जगह नोट लेकर जाइए।"

मैंने पूछा, "अगर मेरे पास केवल दस रुपए के नोट हों, तो एक-एक रुपए के 75 सिक्कों की जगह मुझे कितने नोट और कितने सिक्के ले जाने चाहिए?" अधिकांश बच्चों ने सही जवाब दिए, " दस रुपए के 7 नोट और एक-एक रुपए के 5 सिक्के।" मगर एक बच्चे ने थोड़ा अलग ढंग से जवाब दिया : "या फिर 50 + 20 + 5!" यानी उसने 50 को पाँच दहाई और 20 को दो दहाई के रूप में सोचा। बच्चों की सोच में एक लचीलापन दिखाई दे रहा था। इस लचीलेपन और संख्याओं को अलग-अलग हिस्सों में बाँटकर समझने की उनकी क्षमता को देखते हुए मैंने उन्हें इसी दिशा में और सोचने के लिए प्रेरित किया। इकाइयों को गिनने और जोड़ने के ढर्रे से बाहर निकलकर संख्याओं को दहाई और इकाई के समूहों में रीग्रुपिंग करने का यह बदलाव किसी बने-बनाए नियम के तहत नहीं, बल्कि खोजपरक और साझा चिन्तन का परिणाम था। जब विद्यार्थी रोज़मर्रा की वस्तुओं की वास्तविक क़ीमतों पर काम कर रहे थे तो उन्होंने स्वाभाविक रूप से प्रत्येक संख्या को दहाइयों और इकाइयों में बाँटना शुरू किया। उन्होंने पहले दहाइयों को एक साथ जोड़कर क़ीमत निकाली, फिर इकाइयों को एक साथ जोड़ा। अन्त में दोनों से प्राप्त क़ीमत को मिलाकर उत्तर निकाला। इस प्रत्यक्ष अनुभव से उन्हें स्थानीय मान की अवधारणा को अर्थपूर्ण ढंग से समझने में मदद मिली और यही समझ आगे चलकर बड़ी संख्याओं के स्तम्भ जोड़ (column addition) का आधार बनी।

भौतिक मुद्रा के साथ काम करने से बच्चों को ठोस अनुभव से अमूर्त चिन्तन की ओर बढ़ने में मदद मिली। कक्षा में हुई चर्चाओं ने उन्हें अपनी सोच को अभिव्यक्त करने और आवश्यकतानुसार उसमें संशोधन करने का अवसर दिया। और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रही कि सीखने का यह सिलसिला कक्षा ख़त्म होने के बाद भी जारी रहा, जो यह दिखाता है कि आनन्ददायक और अर्थपूर्ण पढ़ाई किस तरह दिलो-दिमाग़ में हमेशा के लिए बस जाती है।

अगले दिन मैंने सुनियोजित तरीक़े से तैयार की गई शिक्षण सामग्री के ज़रिए स्थानीय मान के बारे में बच्चों की समझ को और गहरा करने का प्रयास किया। इसके लिए मैंने द्वि-आयामी बेस-10 ब्लॉक्स (2D Base-10 Blocks) का उपयोग किया, जिन्हें सामान्यतः FLU (फ्लैट्स, लॉन्स और यूनिट्स) कहा जाता है।

इनमें 10 छोटे वर्गों से बनी एक लम्बी पट्टी एक दहाई (लॉन्ग) को निरूपित करती है, जबकि प्रत्येक छोटा वर्ग एक इकाई (यूनिट) को दर्शाता है। मैंने सबसे पहले बच्चों को केवल वह लम्बी पट्टी दी और उसे ध्यान से देखने के लिए कहा। फिर उनसे पूछा, "तुम्हें इसमें क्या दिखाई दे रहा है?" कई बच्चों ने तुरन्त जवाब दिया, "इस एक लम्बी पट्टी में 10 छोटे-छोटे वर्ग हैं!" यह मूर्त अनुभव से अमूर्त समझ की ओर ले जाने वाला एक उचित सेतु साबित हुआ।

इस जुड़ाव को और अधिक व्यावहारिक बनाने के लिए मैंने प्रत्येक विद्यार्थी को अलग-अलग संख्या में इकाई वाले कुछ छोटे वर्ग दिए और उन्हें गिनने को कहा। उन्होंने सहज रूप से उन छोटे-छोटे वर्गों को 10-10 के समूहों में व्यवस्थित करना शुरू कर दिया। जैसे ही 10 वर्गों का कोई समूह पूरा होता, मैं उन्हें उसके बदले (दहाई की) एक लम्बी पट्टी थमा देती। अनेक इकाइयों को दहाइयों में बदलने की इस सहज प्रक्रिया ने बच्चों को बड़ी आसानी से समझा दिया कि *दस अलग-अलग इकाइयों का मतलब एक दहाई* ही होता है।

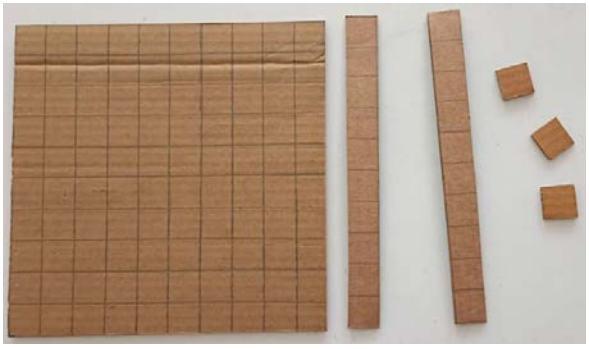

चित्र-1 : फ्लैट्स-लॉन्स-यूनिट्स (FLU)

एक लॉन्ग = 10 यूनिट, एक यूनिट वर्ग = 1 इकाई

इन ब्लॉक्स की वजह से अनेक विद्यार्थी दहाई और इकाई के ढाँचे को देख सके। अपने सामने संख्याओं को इस तरह रखा देखकर वे संख्याओं की बनावट और उनकी रीग्रुपिंग के गणितीय तर्क को आसानी से समझ पा रहे थे। इसके बाद मैंने उनसे इन्हीं ब्लॉक्स के ज़रिए प्रत्येक वस्तु की क़ीमत को दर्शाने के लिए कहा। इससे वे मूर्त वस्तुओं (सिक्कों एवं ख़रीददारी) से निकलकर प्रतीकात्मक सामग्री (ब्लॉक्स) की ओर बढ़ सके। दरअसल, मैं उन्हें आगे आने वाली अमूर्त गणितीय अवधारणाओं के लिए तैयार कर रही थी, जहाँ वे

अपनी ख़ुद की खोज-पड़ताल के ज़रिए 'स्थानीय मान' को समझ रहे थे। शुरुआत में यह गतिविधि केवल गिनती करने और दहाई व इकाइयों के रीग्रुपिंग तक सीमित थी। उस दिन इन ब्लॉक्स की सहायता से कुल योग निकाले जाने की कोई अपेक्षा नहीं थी।

FLU सामग्री ही क्यों? मैंने डीन्स ब्लॉक्स के स्थान पर FLU सामग्री इसलिए चुनी, क्योंकि मैं चाहती थी कि विद्यार्थी ऐसी चीज़ों के साथ काम करें जो हमारी कक्षाओं में आसानी से सुलभ रहें और व्यावहारिक भी हों। हालाँकि स्थानीय मान सिखाने में डीन्स ब्लॉक्स अधिक असरदार होते हैं, लेकिन पूरी कक्षा के लिए मेरे पास गिने-चुने सेट ही उपलब्ध थे। हैंडमेड FLU सामग्री से यह सुनिश्चित हो सका कि कक्षा का हर बच्चा इसमें सक्रिय रूप से भाग ले सके और ख़ुद इसका अभ्यास कर सके। इसके अलावा, इन्हें तैयार करना न केवल किफ़ायती होता है, बल्कि आसान भी। कोई भी शिक्षक कक्षा में उपलब्ध साधारण संसाधनों से इन्हें बेहद आसानी से बना सकता है।

अगले दिन, हमने दो अंकों की संख्याओं के जोड़ के लिए FLU किट का उपयोग किया। मैंने जान-बूझकर ऐसी संख्याओं का चयन किया था, जिनमें इकाइयों का योग नौ से अधिक न हो (जैसे 31 + 13 या 47 + 21)। इससे बच्चे 'हासिल' की जटिलताओं में फँसे बिना इकाइयों और दहाइयों के आपसी सम्बन्ध पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सके। जब विद्यार्थियों ने अपने उत्तर लिखे तो उन्हें ख़ुद यह पैटर्न समझ में आ गया कि इकाइयाँ इकाइयों के साथ जुड़ती हैं और दहाइयाँ दहाइयों के साथ। इस तरह स्तम्भ जोड़ का तरीक़ा ख़ुद-ब-ख़ुद आकार ले रहा था। यह गणितीय विधि मैंने नहीं सिखाई थी, बल्कि उनके अपने अवलोकनों से स्वयं उपजी थी।

चित्र-2 : फ्लैट्स-लॉन्स-यूनिट्स सामग्री का उपयोग करते हुए विद्यार्थी। (बच्चों ने टेबल पर व्हाइटबोर्ड मार्कर से लिखा था, जिसे आसानी से मिटाया जा सकता था। इससे टेबल की सतह पर कोई स्थायी निशान नहीं पड़ा।)

जब बच्चों को यह सब कुछ अच्छे से समझ में आ गया, उसके बाद हम उन गणनाओं की ओर बढ़े जिनमें इकाइयों का योग नौ से अधिक हो। उदाहरण के तौर पर, 32 और 29 को जोड़ते समय विद्यार्थी 11 इकाइयों तक पहुँचे। इस मौक़े पर एक बच्चे ने 'भोला' की उस सुपरिचित कहानी का उल्लेख किया (https://bit.ly/4f2cODg), जिसमें वस्तुओं को 10-10 के समूहों में बाँटकर फिर से रीग्रुपिंग करने की बात कही गई है। इसे सुनकर कुछ देर के लिए कक्षा में सन्नाटा छा गया। फिर अचानक बड़े उत्साह के साथ एक बच्चा खड़ा हुआ और बोला, "हाँ, सही कहा! इन 10 इकाइयों को मिलाकर हम एक दहाई बना सकते हैं, बिल्कुल वैसे ही जैसे हमने पहले स्ट्रिप्स और इकाइयों को गिनते समय किया था।"

उस पल दहाई को 'हासिल' देने का विचार केवल एक रटा-रटाया या यांत्रिक नियम न रहकर एक बेहद सहज और असरदार एल्गोरिदम बन गया, जो पूरी कक्षा को समझ में आ रहा था। 32 और 29 को FLU किट के ज़रिए देखने पर बच्चों का ध्यान एक ख़ास बात की ओर आकर्षित हुआ : जब इकाइयाँ नौ से ज़्यादा हो जाती हैं तो वे केवल बढ़ती ही नहीं हैं, बल्कि ख़ुद को नए सिरे से समूहबद्ध करके एक नई दहाई का रूप ले लेती हैं। पारम्परिक गणित जिसे 'हासिल' कहता है, वह अब बच्चों के लिए कोई गूढ़ रहस्य नहीं रह गया था, बल्कि समूहबद्ध होने का एक स्वाभाविक और तार्किक परिणाम बन चुका था।

विद्यार्थियों को एहसास हुआ कि जब भी इकाइयों का योग नौ से अधिक होता है, वे ख़ुद-ब-ख़ुद समूहबद्ध होकर एक दहाई का रूप ग्रहण कर लेती हैं और अपना स्थान दहाई की ओर बदल लेती हैं। इस तरह, लिखा जाने वाला यह एल्गोरिदम अब थोपी गई कोई मजबूरी नहीं रहा, बल्कि उनकी अपनी सोच व समझ का एक अर्थपूर्ण दस्तावेज़ बन गया। समूह बनाना तो वे यूकेजी की कक्षा से ही सीखते आ रहे थे, लेकिन इस अनुभव ने उन्हें उस पुरानी जानी-पहचानी क्रिया को गणितीय प्रतीकों और अंकों से सम्बद्ध कर दिया। इस पूरी प्रक्रिया में उन्होंने केवल यह नहीं सीखा कि जोड़ 'कैसे' होता है, बल्कि यह भी समझा कि यह 'क्यों' होता है। इस तरह, चरण-दर-चरण अपनाई जाने वाली विधि एक जीवन्त गणितीय समझ में बदल गई।

निष्कर्ष

जैसा कि इस लेख में बताया गया, यह पूरा पाठ पैसों और

ख़रीददारी के रोज़मर्रा के अनुभवों से शुरू होकर संख्याओं को दहाई और इकाई के रूप में प्रस्तुत करने तक आगे बढ़ा। FLU जैसी शिक्षण सामग्रियों के ज़रिए 10 इकाइयों की जगह एक दहाई को रखने की इस प्रक्रिया को समझने के लिए पर्याप्त समय दिया गया। इस गतिविधि के समापन के बाद हम लिखित जोड़ नियम तक पहुँचे, जो वास्तव में बच्चों द्वारा लिखित रूप में दर्ज करने की प्रक्रिया थी।

शिक्षण का मेरा यह सफ़र बच्चों के जाने-पहचाने सन्दर्भों से शुरू हुआ। इसमें ठोस एवं मूर्त सामग्रियों का सोच-समझकर प्रयोग किया गया, बच्चों के अनौपचारिक तरीक़ों को सुना एवं सराहा गया और फिर धीरे-धीरे उन्हें प्रतीकात्मक साधनों व गणितीय संकेतों की ओर ले जाया गया। इस पूरे अनुभव ने मेरे भीतर यह संकल्प जगाया कि मैं घटा के गणितीय नियम सिखाने के लिए भी इसी तरीक़े का इस्तेमाल करूँगी!

सोनिया कुण्डू 2018 से फ़ाउण्डेशनल स्टेज की शिक्षिका हैं और बच्चों में बुनियादी साक्षरता एवं संख्यात्मक ज्ञान को मज़बूत करने के लिए प्रतिबद्ध रही हैं। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ काम करते हुए उन्होंने ज़मीनी स्तर पर शिक्षा की व्यावहारिक हक़ीक़तों को गहराई से समझा है। वर्तमान में वे नोएडा स्थित हेरिटेज एक्सपेरिएंशियल लर्निंग स्कूल में कार्यरत हैं, जहाँ वे छोटे बच्चों के लिए आनन्ददायक, अर्थपूर्ण और बाल-केन्द्रित शिक्षण अनुभव को बढ़ावा दे रही हैं। उनसे soniakundu1911@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : जयजीत अकलेचा **पुनरीक्षण :** प्रतिका गुप्ता **कॉपी-एडिटर :** अनुज उपाध्याय